आखर हिंदी पत्रिका; e-ISSN-2583-0597 खंड 3/अंक 5/दिसंबर 2023
Received:08/12/2023; Accepted:15/12/2023; Published:26/12/2023

"जनतंत्र से सवाल करती धूमिल की कविताएँ"

डॉ. विजय कुमार वर्मा
एसो. प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
जवाहरलाल नेहरू स्मारक स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
बाराबंकी, उ.प्र.
ई-मेल: dr.vijaikumarverma@gmail.com

डॉ. विजय कुमार वर्मा,**"जनतंत्र से सवाल करती धूमिल की कविताएँ"** , आखर हिंदी पत्रिका, खंड 3/अंक 5/दिसंबर 2023, (508-515)

सारांश: धूमिल की कविताएँ जनतंत्र का गान करने वाली कविताएँ हैं। उनकी कविताएँ सीधे लोकतंत्र, संसद, नेता आदि को लगातार चुनौती देते रहते हैं। धूमिल देश की संपदा पर पूँजीपतियों के अधिकार से संतुष्ट नहीं थे। वे पूँजीवादी लोकतंत्र की जगह जनवादी लोकतंत्र के प्रबल समर्थक थे। उन्होंने जनतंत्र पर तीखी एवं कड़ी आलोचना की है। इस आलोचना में उनकी दृष्टि सदैव पैनी बनी रही। पूँजीवादी लोगों की कमर तोड़ रहा है, गरीबमजदूर कभी भी मुख्य धारा में आ ही नहीं पा रहा। उनकी रचनाओं में जनतंत्र-किसान-, आजादी, लोकतंत्र सब निरर्थक और निस्सार सिद्ध होते हैं। उनकी कविताओं में राजनीतिक चेतना, सामाजिक चेतना, इतिहास बोध, विसंगति एवं विडम्बना बोध आदि का चित्रण बहुतायत रूप में हुआ है। इन सब में जनतंत्र पर व्यंग्य करते हुए जनता के पुर्नजागरण का गान करती हैं।

मुख्य शब्द - जनतंत्र, पूँजीवाद, संसद, लोकतंत्र, आजादी, भूख, गरीबी, जनता, निरर्थक, मानसिकता

हिन्दी साहित्य में धूमिल का व्यक्तित्व उस धूमकेतु की तरह है, जो कभीकभी ही आकाश में दिखायी - पड़ता है। धूमिल की कविताएं सीधे और सपाट रूप में जनतंत्र को संबोधित करने वाली कविताएँ हैं। ये वे सीधे देश के लोकतंत्र-कविताएँ हैं जो सीधे, संसद और नेताओं की तीखी आलोचना के लिए लिखी गयी है, जो उनके व्यवहार, लचर व्यवस्था, प्रशासन आदि का सवाल खड़े करती हैं। धूमिल की कविताएँ व्यक्ति, समाज,

संस्था, राजनीति और जनतंत्र की पोल खोलती नज़र आती है। विश्वनाथ प्रसाद तिवारी का कथन है -"धूमिल की कविता सच्चे अर्थों में सड़क और संसद अर्थात् जनता और जनतंत्र की कविता है। उनकी कविता की सारी शब्दावली सामाजिक और राजनीतिक संसार की शब्दावली है।"1 उन्होंने जनतंत्र पर तीखी, कड़ी एवं पैनी प्रतिक्रिया व्यक्त की है। साथ ही पूँजीवादी व्यवस्था के प्रति उनका विद्रोह जग जाहिर है। जो केवल अपने बारे में सोचती है, मनुष्य से उसका नाता जैसे कोई ही ही नहीं। लोकतंत्र, संसद, आजादी आदि जैसे निरर्थक एवं निस्सार सिद्ध करने के लिए उन्होंने अपनी कविताओं की रचना की है। धूमिल को कविता का कवि मानकर ही उन्हें समझा जा सकता है जीवन के यथार्थ को बेबाक चित्र और नंगी सच्चाई को व्यक्त करने में कोई हिचक नहीं दिखती, धूमिल का उत्साह तमाम सीमाओं का अतिक्रमण भी करता है। 'जनतंत्र के सूर्योदय में' शीर्षक कविता में कवि मातृभाषा, मुर्दा इतिहास, आपराधिक गतिविधियों के साथ ही समसामयिक विसंगतियों पर कड़ा प्रहार करते हैं। धूमिल जो कुछ कहते हैं खुलकर कहते हैं। मातृभाषा राष्ट्रभाषा की उपेक्षा पर-धूमिल की तड़प देखिए

"यह जानकर कि तुम्हारी मातृभाषा
उस महरी की तरह है, जो
महाजन के साथ रातभर-
सोने के लिए
एक साड़ी पर राजी है
सिर कटे मुर्गे की तरह फड़कते हुए,
जनतंत्र में
सुबह -
सिर्फ चमकते हुए रंगों की चालबाजी है।"2

समाज के बीच व्याप्त बुराईयों को खत्म करने में कवि अकेला कुछ नहीं कर सकता है। जनतंत्र की बाधाओं के बीच कवि और कविता कितनी देर तक संघर्ष करेंगे यह कह पाना मुश्किल है। आज समाज पूरी तरह से दूषित हो चुका है। वह गलत व्यवस्था के हाथों में चला गया है। यह व्यवस्था उस दरिन्दे की तरह है जो वास्तव में तो मर चुका है, लेकिन उसके नाखून अभी भी जिन्दा है। धूमिल समकालीन कवियों को आगाह करते हुए कहते हैं कि -

"वक्त बहुत कम है।
इसलिए कविता पर बहस, शुरू करो
और शहर को अपनी ओर झुका लो
क्योंकि असली अपराधी का
नाम लेने के लिए, कविता, सिर्फ उतनी ही देर सुरक्षित है

जितनी देर, कीमा होने से पहले
कसाई के ठीहे और तनी हुई गड़ांस के बीच
बोटी सुरक्षित है।"3

अगर कविता राष्ट्र का उद्धार नहीं कर सकती तो वह कविता सार्थक नहीं है और उसका कवि देशभक्त नहीं हो सकता। राष्ट्र का उद्धार करने में मदद करने वाला ही कवि राष्ट्रभक्त हो सकता है-

"अपने देश की मिट्टी को आँख की पुतली समझता है
वर्ना, रोटी के टुकड़े पर
किसी भाषा में देश का नाम लिखकर
खिला देने से, कोई देशभक्त नहीं होता।"4

शोषितों को शोषित होते हुए देखकर धूमिल की आत्मा कराह उठती है। वे इसके लिए जनतंत्र को जिम्मेदार मानते हैं। उनका मानना था कि जनतंत्र के पुरोधा लोग अपराधियों को संरक्षण प्रदान कर रहे हैं। इसलिए जनतंत्र एक मजाक बनकर रह गया है। देश में अपराध का ग्राफ बढ़ता जा रहा है, और इन सब के पीछे देश के नेताओं का संरक्षण है, जो इनके फलने- फूलने के लिए आधार भूमि तैयार कर रहे हैं-

"गरज रहा है कि अपराध
अपने यहाँ एक ऐसा सदाबहार फूल है
जो आत्मीयता की खाद पर
लालभड़क फूलता है-
मैंने देखा कि इस जनतांत्रिक जंगल में
हर तरफ हत्याओं के नीचे से निकलते हैं
हरेहरे हाथ-, और पेड़ों पर
पत्तों की जुबान बनकर लटक जाते हैं
वे ऐसी भाषा बोलते हैं जिसे सुनकर
नागरिकता की गोधूलि में
घर लौटने हुए मुसाफिर, अपना रास्ता भटक जाते हैं।"5

धूमिल का व्यक्तित्व सहज, सरल तथा साफ था। गाँव के साधारण कवि को शहर के दाँवपेंच को समझना आसान नहीं है। जो सच्चाई, ईमानदारी और मेहनत-मुहब्बत को मनुष्य का वजूद मानता हो वह छल-

कपट, दॉवपे-ंच को इंसानियत का शत्रु मानता है। समाज की जो राजनीति दिखाई पड़ती है उसके पीछे का सच बड़ा ही भयानक होता है। 'कवित के भ्रम में' इसकी एक बानगी देखिए -

"जहाँ हवा काली है। जीने का जोखम है।
सपनों का वयस्क लोकतंत्र है।
आदमी होने का स्वाद है।
मैं थोड़ा और आगे जाना चाहता हूँ,
जहाँ जीवन अब भी तिरस्कृत है
संसद की कार्यवाही से निकाले गये वाक्य की तरह।"6

धूमिल की कविता व्यक्ति, समाज, संस्था, राजनीति और जनतंत्र की पोल खोलती नज़र आती है। उनका गुस्सा उनकी कविताओं में स्पष्ट दिखायी पड़ता है। यह गुस्सा उनका अकेला नहीं है जनता का है और जनता ही इस स्थिति के लिए जिम्मेदार भी है। जनता की लापरवाही या यूँ कहें उसकी उदासीनता ही इस स्थिति के लिए जिम्मेदार है। उनकी 'जनतंत्रएक हत्या सन्दर्भ :' शीर्षक कवि सन्तोष कुमार कपूरिया की निर्मम हत्या के सन्दर्भ में है। उनकी यह कविता जनतंत्र से प्रश्न करती है कि वह ऐसे समय कहाँ चला जाता है, जब उसे मौजूद रहना होता है -

"खून के थक्के में तलफता हुआ
जब वह युवा जिस्मगिर पड़ा रास्ते के ठीक बीचोंबीच/
उस वक्त जनतंत्र किधर था?
दम तोड़ती हुई साँसों के, सिरहाने या पैताने.....
उस वक्त जनतंत्र कहा था?
बारबार मुझसे पूछती है वह बालिग लड़की-
कविता उसका नाम है, उसकी आँखों में शक है, आँसू है
आँसू में तैरता हुआ कितना सवाल, रहरहकर-
मेरा चेहरा टटोलता है, उस वक्त जनतंत्र किधर था।"7

देश के आज़ाद हो जाने के बाद लोकतंत्र की स्थापना हो गयी। लोगों ने अपने मतदान से इसको स्थापित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी, लेकिन यह लोकतंत्र क्या सचमुच जनता को न्याय देने में सक्षम हो पा रहा है। इसके लिए जनता को स्वतंत्रता, अधिकार, कर्त्तव्य, दायित्व आदि से परिचित करा देने से ही काम पूरा नहीं हो

जाता है। जनतंत्र की स्थापना की शुरूआत बाहर से पहले अपने घर में ही करना पड़ेगा। वे 'मतदाता' शीर्षक कविता में जनता को सचेत करते हुए लिखते हैं कि -

"कहने का मतलब यह है कि भाइयों
जनतंत्र जनता से नहीं, घर की जंग से शुरू होता है
और फिर पहली बार यह जानकर
वह खुश होगा कि मतपेटी में
मतपत्र के साथ वह अपनी समझ नहीं डाल आया
आज भी अगली लड़ाई के लिए उसके दाँत और नाखून -
एक रोटी पर सुरक्षित हैं।"8

धूमिल की कविताओं का राजनीति से गहरा सम्बन्ध है। ये कविताएं राजनीति का सीधा साक्षात्कार प्रस्तुत करती हैं। मैकलीश का कथन है कि -"राजनीतिक कविता लिखना सीधा राजनीतिक या क्रान्तिकारी होने से ज्यादा मुश्किल व्यापार है।"9

उनकी कविताएँ आम आदमी के संघर्ष प्रेरणा स्रोत हैं। वर्तमान राजनीति व्यवस्था के प्रति उनके अन्दर आक्रोश है। 'प्रौढ़ शिक्षा' शीर्षक कविता में कवि ने तत्कालिक जनतांत्रिक व्यवस्था की ओर संकेत करते हुए कहते हैं कि -

"मैं फिर कहता हूँ हर हाथ में,
गीली मिट्टी की तरहहॉ मत करो-तरह हॉ-
तनोअमरबेलि की तरह मत जियो/अकडो/
जड़ पकड़ोंबदलो अपने आप को बदलो/
यह दुनिया बदल रही है।"10

धूमिल नहीं चाहते कि लोग अमरबेलि की तरह जियें। आज आजादी के 75 वर्ष पूरे हो गये हैं। देश ने जिस समाजवाद की परिकल्पना की थी वह महज कल्पना बन कर रह गया, हॉ वह एक नारा जरूर है और समय- समय पर लगाया भी जाता है। वे लिखते हैं-

"मेरे देश का समाजवाद
मालगोदाम में लटकी हुयी

उन बाल्टियों की तरह है, जिन पर 'आग' लिखा है
और उनमें बालू और पानी भरा है।"11

कवि इस व्यवस्था को बदलना चाहता है, लेकिन उसके लिए न तो अपने को और न जनता को तैयार पाते हैं। व्यक्ति को समाज से खतरा नहीं है। समाज की व्यवस्था से खतरा हो सकता है। धूमिल इस खतरे को पहचान लेते हैं। समाज की विसंगतियों पर प्रहार करने में वे सफल है। आम आदमी के सम्बन्ध में उनका गहरा अनुभव और उसकी संवेदनाओं की सच्चाई उनसे अच्छा और कौन जान सकता है। उनका मानना था कि सत्य जहाँ वहाँ बदबू ही आयेगी। धूमिल की कविता है-जहाँ सत्य को छिपाने की कोशिश होगी वहाँ-'कर्फ्यू में एक घन्टे की छूट' में वे प्यार और गुस्से के साथसाथ यौवन के दो पहलू स-ामने रखते हैं, जिनमें एक तरफ सपनों की तस्वीर है तो दूसरी तरफ जनतंत्र को समझने की उत्कंठा -

"यौवन ऐसा सिक्का है, जिसके एक ओर प्यार
और दूसरी ओर गुस्सा छपा है।
कम से कम यह एक सबूत है, उसके जिंदा रहने का
कि वह 'लोकसभाभवन-' की ओर जा रहा था।
महज लाल स्कार्फ के साथ
जिसे उसने झण्डे की तरह उठा रखा था।
और अभी उसके, अपने 'मतदान' के खिलाफ
होने का सवाल ही नहीं उठता था
क्योंकि वह एक साथ चुन लेना चाहता है -
तितलियाँ, स्कार्फ, होंठ और फूलों के जादुई रंग।"12

धूमिल अपने हाथ में कविता और दिमाग में आँतों का एक्सरे लिए रहते ह-ैं। यह कविता उनके अपने भले के लिए है, या नहीं, यह प्रश्न नहीं है। वे अपने गाँव गोबर, कण्डे, गोमूत्र और लोकतंत्र का नंगा चेहरा देखते हैं। जनसंघर्ष और जनसंवेदना के प्रति अपनी गहरी समझ रखने वाले धूमिल ए0सी0 में बैठकर कविता नहीं लिखते, उनका अपना शहर है, लोग हैं, समाज है। वे लिखते हैं -

"मुझे अपनी कविताओं के लिए
दूसरे प्रजातंत्र की तलाश है।"13

धूमिल संघर्षों से भागने वाले नहीं बल्कि संघर्षों से लड़ने वाले कवि थे। उन्होंने कविता की चुनौती को स्वीकार किया। उनके खोजी व्यक्तित्व ने कविता को हाशिये से खींचकर मुख्यधारा में खड़ा किया। वे जीवन भर

संघर्ष करते रहे और लोगों को इसके लिए बराबर तैयार करते रहे। उनके इस फौलादी स्वभाव की हुंकार उनकी कविताओं में स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है -

"शब्द किस तरह, कविता बनते हैं
इसे देखो, अक्षरों के बीच गिरे हुए
आदमी को पढ़ो
क्या तुमने सुना है कि यह
लोहे की आवाज है या
मिट्टी में गिरे खून का रंग।
लोहे का स्वाद, लोहार से मत पूछो
उस घोड़े से पूछो, जिसके मुँह में लगाम है।"14

उनका कहना था कि एक सही कविता पहले एक सार्थक वाक्य होती है। "जो व्यक्ति शब्द से बना था, जिसकी कद काठी में कविता एक बज्र की तरह प्रहारक थी और ऊर्जा आत्मशक्ति बन जाती थी, जो धूल में भी विश्वनाथ की भभूति का आनंद लेता था और अंधकार जिसके पास फटकने से डरता था वह धूमिल कैसा होगा?" कविता के लिए, आम आदमी के लिए तमाम विरोधों और दुर्गंधों के खिलाफ खड़े होने के लिए धूमिल की कविताएं जरूरी हैं। जनतंत्र से सम्बन्ध में यह और भी यथार्थ हो जाती हैं। हिन्दी साहित्य का यह देदीत्यमान नक्षत्र साहित्याकाश में अपनी आभा इस प्रकार बिखेर रहा है कि कविता का नया अध्याय उसके बिना शुरू ही नहीं होता है -

कविता पर बहस शुरू करो/
और शहर को अपनी ओर झुका लो
यह सबूत के लिए है।

सन्दर्भ सूची:

1. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, समकालीन हिन्दी कविता, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1982, पृ0 197

2. धूमिल संसद से सड़क तक -, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, पृ0 13

3. वहीं, पृ0 86

4. वहीं, पृ0 97

5. वहीं, पृ0 109

6. धूमिल सुदामा पांडेय का प्रजातंत्र -, वाणी प्रकाशन दिल्ली, पृ0 27

7. वहीं, पृ0 69

8. वहीं, पृ0 80

9. मैकलीरा, पोपट्री एंड एक्सपीरियन्स, पृ0 937, संपादन हिन्दी विभाग, पूणे विद्यापीठ, पूणे सठोत्तर - हिन्दी साहित्य का परिप्रेक्ष्य

10. धूमिल संसद से सड़क तक -, पृ0 48

11. वहीं, पृ0 127

12. धूमिल सुदामा पांडे का प्रजातंत्र -, पृ0 44

13. धूमिल से सड़क तक संसद -, पृ0 66

14. धूमिल कल सुनना मुझे -, वाणी प्रकाशन दिल्ली, पृ0 80

****